ऐसा नहीं करेगा तो उसे माया की सेवा करनी पड़ेगी।

पूर्वकथन के अनुसार, श्रीभगवान् का आस्वादन और अनुभव भक्तियोग से ही किया जा सकता है; अतः पूर्ण रूप से भक्त हो जाना चाहिए। श्रीकृष्ण की प्राप्ति के लिए मन को उनमें एकाग्र करके उन्हीं की प्रीति के लिये कर्म करना है। कर्म के प्रकार का महत्त्व नहीं है, आवश्यक यह है कि प्रत्येक कर्म श्रीकृष्ण के लिये किया जाय। यही भक्तियोग का आदर्श है। श्रीभगवान् को प्रसन्न करने के अतिरिक्त भक्त कोई दूसरा फल नहीं चाहता। उसके जीवन का ऐकान्तिक लक्ष्य श्रीकृष्ण की प्रीति का सम्पादन करना है। इसके लिये वह सर्वस्व-त्याग कर सकता है, वैसे ही जैसे कुरुक्षेत्र के युद्ध में अर्जुन ने किया था। भक्तियोग का यह पथ अतिशय सुगम है। अपने दैनिक कार्य में संलग्न रहते हुए भी, **हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे, हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे**—इस महामन्त्र का कीर्तन किया जा सकता है। भक्त इस दिव्य कीर्तन के प्रताप से श्रीभगवान् में अनन्य भाव से अनुरक्त हो जाता है।

श्रीभगवान् ने इस श्लोक में वचन दिया है कि इस प्रकार भक्तियोग के परायण शुद्धभक्त का वें भवसागर से शीघ्र उद्धार करते हैं। जो योगाभ्यास में उन्नति कर चुके हैं, वे योगबल के द्वारा अपने आत्मा को स्वेच्छा से किसी भी लोक में ले जा सकते हैं। जो भक्त नहीं हैं, वे इस सुयोग का नाना प्रकार से लाभ उठाते भी हैं। परन्तु भक्त के सम्बन्ध में तो विशेष रूप से कहा है कि श्रीभगवान् उसे स्वयं इस मृत्युलोक से ले जाते हैं। भक्त को वैकुंठ की प्राप्ति के लिये सुदीर्घकालीन अभ्यास की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। 'वराहपुराण' में कथन हैः

नयामि परमं स्थानमर्चिरादि गतिं विना।
गरुडस्कन्धमारोप्य यथेच्छमनिवारितः।।

इस श्लोक का तात्पर्य है कि भक्त को दिव्य लोकों की प्राप्ति के लिए अष्टांगयोग के अभ्यास की आवश्यकता नहीं है। उसके दायित्व का स्वयं श्रीभगवान् वहन करते हैं। श्रीभगवान् ने स्पष्ट किया है कि वे स्वयं उसका उद्धार कर ले जाते हैं। एक बालक के संरक्षण का भार पूर्णरूप से उसके माता-पिता पर रहता है; इससे उसकी स्थिति सर्वथा निरापद है। ऐसे ही, भक्त को अन्य लोकों की प्राप्ति के लिये योगाभ्यास के द्वारा आयास-प्रयास नहीं करना पड़ता। अपितु, अपनी महती करुणा से अभिभूत होकर गरुड़जी पर विराजमान श्रीभगवान् स्वयं तुरन्त प्रकट हो जाते हैं और अपने भक्त का इस भवसागर से अविलम्ब उद्धार कर देते हैं। सागर में गिरा मनुष्य कितना भी संघर्ष क्यों न करे अथवा तैरने में कितना भी कुशल क्यों न हो, परन्तु स्वयं अपनी रक्षा नहीं कर सकता। पर यदि कोई दूसरा उसकी जल से रक्षा करे तो वह सुगमता से बच सकता है। इसी भाँति, श्रीभगवान् भी इस भवसागर से अपने भक्त को बचाते हैं। इसके लिये कृष्णभावना की सुगम पद्धति का अभ्यास करते हुए पूर्णतया भक्तियोग में तत्पर रहना मात्र है। अन्य पथों की अपेक्षा बुद्धिमान् मनुष्य सदा